शायद ये जानना हमारे लिए निहायत जरूरी है कि महागुरु ने अपने अतीत के शिष्यों को कैसे इकट्ठा किया। आइए रुख करते हैं सब्र,तालमेल और अद्भुत मिलन की एक बेमिसाल कहानी की तरफ...

कलेक्शन सेंटर

अक्सर लोग मुझसे यह जानना चाहते हैं कि गुरुदेव ने अपने शिष्यों को कैसे चुना था। यह बात भी गौरतलब है कि जिन लोगों को उन्होंने चुना, वे देखने में तो आध्यात्मिक कार्यों के काबिल नहीं लगते थे। उन लोगों में मैं भी शामिल था।

हमारे हुलिए, हाव-भाव, चाल ढाल और तौर तरीके कहीं से भी आध्यात्मिक नहीं थे। हम लोग जिंदगी के अलग-अलग रास्तों से आए थे, हमारी शिक्षाएं अलग थीं, हमारी सामाजिक पृष्ठभूमि अलग थी और हम में से कई लोग तो अध्यात्म का 'अ' भी नहीं जानते थे। कुछ लोगों की धर्म में दिलचस्पी थी, लेकिन हममें से बहुत-से लोगों को तो इससे कोई लेना-देना ही नहीं था।

बहरहाल, जब मुझे अपनी एक ध्यान मुद्रा का ख्याल आया, जो मैंने लगभग एक दशक पहले देखी थी, तब यह गुत्थी भी सुलझ गई। मैंने देखा कि गुरुदेव आसमान में झूलते एक मंच पर विश्राम कर रहे हैं और वहां हम पांच-छह लोग मौजूद हैं। हमने देखा कि दूधिया रंग के चोले पहने सैकड़ों केशरहित संत एक अदृश्य सीढ़ी से पृथ्वी पर उतर रहे हैं। मुझे तुरंत यह आभास हुआ कि वे एक संयुक्त आध्यात्मिक मिशन पर हैं... इस पृथ्वी पर लाखों लोगों के व्यक्तिगत विकास और विचारधाराओं को बदलने का मिशन...!

इन सभी महानुभावों ने अलग-अलग स्थानों पर जन्म लिया और जिंदगी के अलग-अलग मोड़ पर महागुरु से जुड़े।

हालांकि इससे पहले तो स्वयं गुरुदेव को महागुरु बनने की यात्रा तय करनी थी। फिर उन्हें उन महानुभावों को किसी इत्तेफाक या किसी और जरिए से खोजना था और उन्हें अपनी आध्यात्मिक शरण में लेना था।

भविष्य में बनने वाले उनके शिष्य किसी ना किसी बहाने उनके दर पर चले ही आए। कुछ लोग अपने या अपने परिवार के सदस्यों के इलाज के लिए उनके पास पहुंचे,जबकि कुछ लोगों को किसी और तरह की मदद की दरकार थी।

उनसे जुड़ने के बाद गुरुदेव ने उन्हें खुद से जोड़ा और उन्हें अध्यात्म के गहरे सागर में ले गए।

उनके साथ अपने अतीत के संबंधों की वजह से गुरुदेव ने उनमें एक बार फिर विश्वास की अलख जगाई, और उन्होंने भी गुरुदेव को अपना गुरु मान लिया। गुरुदेव ने उन्हें उनके विकास का अभ्यास कराया और फिर उन्हें वो शक्तियां और संकेत चिन्ह दिए, जो सेवा के लिए जरूरी थे।

ये सुनने में बड़ा मुश्किल मालूम होता है ना... पर यह यकीनन हुआ है।

पुंचू सेठी गुरुदेव की परम भक्त हैं और उन्हें लेकर अपनी एक खास राय रखती हैं। वे अपने लड़कपन के दिनों से गुरुदेव से रूबरू हुईं और अब गुरुदेव पर अपना अधिकार महसूस करती हैं।

पुंचू जी : एक गुरु उस युग की आवश्यकता के अनुसार आता है। जैसे गुरु गोबिंद सिंह के समय, हिंदुओं के लिए एक योद्धा गुरु की आवश्यकता थी। तो गुरु गोबिंद सिंह जी आए। अब ऐसे समय में, जब अध्यात्म की बात पहले से ही खराब संदर्भ में की जा रही है, तब गुरुजी आए - वे एक सामान्य व्यक्ति थे। भारत सरकार के लिए काम करने वाले एक सॉइल सर्वे साइंटिस्ट थे। वे पूरी तरह गृहस्थ थे। उनके बच्चे खुश थे, उनकी पत्नी खुश रहती थीं, फिर उन्होंने सेवा की और सैकड़ों लोगों को खुश और संतुष्ट किया।

मैं यहां अप्रत्यक्ष रूप से पुंचू से असहमति जताने वाला हूं। मुझे लगता है कि गुरुदेव की जिंदगी और उनका वक्त तो बस किरदार थे। और हां पुंचू की यह बात भी बिल्कुल सही है कि गुरुदेव यूं ही नहीं बल्कि एक खास मकसद के साथ आए थे। उनका मकसद यह था कि वे लोगों का

कल्याण करें और अपने शिष्यों को मुकम्मल बनाएं। उनकी ज़िंदगी एक ऐसा सबक बन गई, जिसका फलसफा दशकों और सदियों तक बस ऐसे ही लाखों लोगों को प्रेरित करता रहेगा।

उनका असली मकसद तो ये था कि वे लोगों के आत्मिक स्वरूप से उन्हें रूबरू कराएं। रवि त्रेहन जी, जो स्वयं एक शिष्य हैं, इस दास्तान को आगे बढ़ाते हैं.

सवाल : उनके आने और ओम प्राप्त करने, इतनी सेवा करने और इतने सारे शिष्य बनाने का क्या उद्देश्य था? क्या यह सिर्फ विकास की एक प्रक्रिया थी?

रवि जी : गुरु जी ने काफी पहले मुझे यह स्पष्ट रूप से बताया था, "मुझे जन्म लेने की क्या जरूरत थी? जो परिवार मैंने सहेड़ा था (मैं यहां उनके शब्द ही इस्तेमाल कर रहा हूं), जो परिवार मैंने सहेड़ लिया था, जब तक इनका भी कल्याण नहीं हो जाता, तो गुरु का भी कल्याण नहीं होता। इसलिए मुझे फिर जन्म लेना पड़ा, तुम लोगों को फिर इकट्ठा करने के लिए, जिस मोड़ पर तुमको पिछले जन्म में छोड़ा था, उससे और ऊपर उठाने के लिए।"

तो एक गुरु जब अपने शिष्यों के कल्याण की जिम्मेदारी लेता है, जब वो अपने कुछ बच्चों को वर लेता है। वर लेने का मतलब है वो उनकी जिम्मेदारी हो गए। तो जब तक उनका उत्थान नहीं होता, उनका कल्याण नहीं होता, गुरु भी आगे नहीं बढ़ सकता। वो उन्हें छोड़ नहीं सकते। वो उन्हें रास्ते में छोड़कर आगे नहीं जा सकते।

सवाल : क्या उनके शिष्यों की एक निर्धारित संख्या थी, क्योंकि उनकी तादाद तो सैकड़ों में थी या फिर आप यह कह रहे हैं कि सभी उनके शिष्य थे?

रवि जी : उनके शिष्य सैकड़ों में तो नहीं थे। उनके अनुयायियों की अलगअलग- श्रेणी थी - सेवादार, अनुयायी और शिष्य। अब शिष्यों के बाद, उन्होंने यह बात कई बार समझाई थी कि बेटा यह इतने लोग जो बढ़ गए हैं, वो मेरे नहीं, आपके शिष्य हैं। तो एक क्रम बना हुआ है।

गुरुदेव के शिष्य दरअसल वो लोग थे, जो अनुयायी और श्रद्धालु होने का अपना सफर तय कर चुके थे और अब पूरी तरह से अपने गुरु के प्रति समर्पित होने के लिए तैयार थे। उनकी वफादारी, उनके गुण और उनका आज्ञाकारी स्वभाव, उन्हें गुरुदेव के शिष्य की उपाधि दिलाने में

खास भूमिका निभाते थे।हालांकि, दिलचस्प बात यह है कि कुछ लोग गुरुदेव से बस चंद दफा मिले, उनके प्रति आस्था जगाई और ये मान बैठे कि वो गुरुदेव के शिष्य थे। गुरुदेव ने भी उन्हें निराश नहीं किया। उनसे कभी ये नहीं कहा कि असल में वो लोग उनके शिष्य नहीं हैं, बल्कि सिर्फ अनुयायी हैं।

वैसे, एक बात तो बड़ी आम थी कि जब वे हम में से बहुत-से लोगों से मिलते थे, तो अक्सर कहते थे, "तू आ गया है?" उस वक्त तो हमने उन शब्दों पर गौर नहीं किया, लेकिन आगे चलकर हमने जाना कि उन शब्दों के असली मायने क्या थे। दूसरे चरण में गुरुदेव की आध्यात्मिक छत्रछाया में आने वाले बहुत-से लोग उनके शिष्यों के शिष्य बनकर उनसे जुड़े।

इस तरह एक वटवृक्ष से पूरे बाग़ीचे की नींव पड़ी।

मैंने देखा है कि उनके शिष्य पीढ़ी दर पीढ़ी बड़े साधारण तरीक़े से सेवा में शामिल रहे । इस रिकॉर्डिंग के समय हम सेवा के लगभग 50 वर्ष पूरे करने की कगार पर हैं। मुझे उम्मीद है कि इन आध्यात्मिक सहयोगियों के जरिए हम आने वाले और 50 वर्षों या उससे कहीं अधिक समय तक, लोगों की सेवा करने का अपना सफर जारी रखेंगे।

आइए लौटते हैं रवि त्रेहन जी के पास, जो गुरुदेव और उनके पहले शिष्य मल्होत्रा जी समेत कुछ अन्य लोगों के साथ अपने पिछले जन्म के संबंधों के बारे में कुछ दिलचस्प किस्से बताते हैं।

रवि जी : एक दफा मैंने उससे जिज्ञासावश पूछा था, गुरुजी, “शिष्य और गुरु का ये नाता तो एक जन्म का नहीं हो सकता। हमने जरूर कई जन्म साथ बिताए होंगे, और वर्तमान जन्म हमारे पिछले जन्म से ही आगे का सिलसिला है। लेकिन मैं जानना चाहता हूं कि पिछले जन्मों में मेरा आपसे असल में क्या नाता था।”

तो उन्होंने कहा, "बेटा यदि मैंने आपको ऐसे ही अपनी जुबान से बता दिया तो आपको वो मजा नहीं आएगा। यह महागुरु मंत्र का पाठ करतेकरते- रात को सो जाना, फिर देखना क्या तमाशा, क्या नजारा नजर आता है। मैं पाठ करते हुए सो गया। मुझे महसूस हुआ कि मैं 150 या 160 या 170 वर्ष पीछे पहुंच गया हूं, जहां हम अपने पिछले जन्मों में रहा करते थे और गुरुजी वहां

आकर साल में 4, 5 या 6 महीनों के लिए ठहरते थे। हमारी बड़ी-सी हवेली थी, 23-24 कमरों की एक बहुत बड़ी हवेली! हमारे कुछ वर्तमान गुरु-भाई भी अक्सर उस जगह पर आते थे। तो एक तो उन्होंने मुझे यह संकेत दिए। फिर बाद में, मैंने जब उनसे दोबारा पूछा, "पर गुरु जी, आपने तो हमें सिर्फ उस जगह की झलक दिखाई, जहां हम अपने पिछले जन्म में रहते थे।" मैंने उस जगह का एक स्केच भी बनाया और अगले दिन गुरु जी को दिखाया। गुरुदेव उसे देखते ही पहचान गए और उन्होंने बताया कि यह जगह उत्तर प्रदेश के शाहजहांपुर में है। छोटे ईंटों से बनी इमारत थी। ऐसी इमारतें आज भी आप हरिद्वार या दूसरे पुराने शहरों में देख सकते हैं, जहां छोटी ईंटों से निर्माण किया जाता था। फिर मैंने कहा, "गुरु जी इसमें तो आपने मुझे एक झलक दिखाई, जिसमें इस बात का संकेत मिला कि हमारा रिश्ता निरंतर आगे बढ़ रहा है। लेकिन हम जो यह साधना कर रहे हैं, इस गुरु-शिष्य के रिश्ते पर आपने कुछ नहीं बताया।" उन्होंने कहा, "बेटा, तुमने देखा मैं उस जगह पर आता था। मैं वहां 3, 4, 5, 6 महीने रुकता था। मैं वहां आप लोगों से पाठ करवाता था।"

मैंने कहा, मुझे अब भी स्पष्टता नहीं मिली है। तब उन्होंने कहा, "ठीक है, तुम अगले दिन फिर बैठो और एक बार फिर ध्यान करने की कोशिश करो। फिर मैं एक बार फिर 200 साल पीछे चला गया। वो हिमाचल में पहाड़ों में कोई जगह थी। पहाड़ों में पगडंडियां थीं, 10 फीट ऊंचा मचान था और मचान के दोनों तरफ दो गुफाएं थीं। इसके सामने भी दो गुफाएं थीं। मैं बहुत अच्छी तरह पहचान सकता था... मेरा मतलब है मैं खुद को देख सकता था... मैं 125-126 साल का बूढ़ा आदमी था, जिसकी लंबी सफेद दाढ़ी थी, और मैं अपनी मृगशाला भी पहचान सकता था, यहां तक कि मुझे अपना ब्लांकेट भी साफ नजर आ रहा था - उस पर सफेद और काले रंग के चौकोर बने थे; वो छड़ी भी थी जो साधु लोग सपोर्ट के लिए इस्तेमाल करते थे। मैं अपना कलमंडल भी देख सकता था, जिसमें साधु लोग अपना खाना डालकर खाते थे। अगली गुफा भी मुझे स्पष्ट रूप से दिखाई दे रही थी। वो गुरु जी की गुफा थी और मेरी गुफा के सामने मल्होत्रा पापा जी की गुफा थी। उन्होंने मुझे दिखाया कि हमने अपने पिछले जन्मों में साथ मिलकर में कितनी तपस्या की थी। इन सभी बातों से मुझे यह संकेत मिला कि हमारी यात्रा अब भी जारी है।

सवाल : और वो शाहजहांपुर का घर? क्या आपने वहां जाकर देखा?

रवि जी : असल में मल्होत्रा पापा जी वहां गए थे। उन्होंने देखा और उस जगह को पहचान लिया। मैंने उन्हें स्केच दिया था, जिसकी चर्चा मैंने गुरु जी से भी की थी। मल्होत्रा पापा जी ज्यादा उत्सुक थे। वो शाहजहांपुर गए। उन्होंने बताया कि केवल एक फर्क यह था कि आपने बरामदा कच्चा और मिट्टी का बताया था, लेकिन अब वो सीमेंट का हो गया है। इसके अलावा वो वही इमारत थी, जिसके बारे में मैंने बताया था। वो हवेली छोटे ईटों से बनी हुई थी।

पूरण जी उन बहुत-से लोगों में से एक थे, जिनसे गुरुदेव ने अपनी पिछली ज़िंदगी का ज़िक्र किया था। गुरुदेव ने उनसे कहा था कि वे अपने पिछले दो जन्मों से उन्हें जानते हैं। एक बार उज्जैन में और एक बार करीब 500 वर्ष पहले, गुरु नानक जी के समय से उनका नाता है।

आइए पूरण जी को सुनते हैं.

सवाल : क्या उन्होंने आपको कभी आपके पिछले जन्मों या आपसे पिछले संबंधों के बारे में बताया, जो शायद आपके और उनके बीच रहे हों?

पूरण जी : उन्होंने दो बार का बताया था। एक बार जब मैं उज्जैन में सेवा कर रहा था तब, और दूसरी बार पंजाब में जब मैं गुरु नानक जी के समय सेवा कर रहा था। इसके अलावा और कुछ नहीं बताया।

सवाल : तो उन्होंने कहा कि आपने उनके साथ दो जन्म बिताए हैं?

पूरण जी : हां, जो मैं जानता हूं, उन्होंने मुझे बताया था। बाकी मुझे कुछ नहीं पता।

गुरुदेव ने मेरी पिछली जिंदगी के बारे में एक संकेत दिया था, जिससे मैं अपने वर्तमान और अतीत के बीच रिश्ता समझ पाया। उन्होंने मुझसे कहा था कि मैं एक संत आदमी था और लोग अब भी मेरे पिछले जन्म के आश्रम में मत्था टेकने आते हैं। जब उन्होंने मुझसे यह बात कही थी, तो उस समय मेरे लिए इसका अंदाज़ा लगा पाना बहुत मुश्किल था। आज मैं अपनी उस ज़िंदगी और इस ज़िंदगी का संगम देख सकता हूं।

गिरी लालवानी जी की भावनाएं भी कुछ ऐसी ही हैं.

गिरी जी : हम सभी डॉ. शंकर नारायण की बेटी की शादी में बेंगलुरु गए थे। उन्होंने कहा कि वहां से हम मैसूर और फिर ऊटी चलते हैं। रास्ते में हमें एक जगह मिली, जिसका नाम है बांदीपुर। बांदीपुर में एक जंगल है और गुरु जी ने कहा कि यहीं रुकते हैं। अगली सुबह वो झील के किनारे टहल रहे थे।। मैं उनसे मिलने पहुंचा। तब उन्होंने मुझसे कहा, "बेटा, हमारा जो रिश्ता है, वो सिर्फ इस जन्म का नहीं है बल्कि कई जन्मों का है। ना सिर्फ तुम, बल्कि मेरे जितने भी बच्चे हैं, वो कई जन्मों से मेरे साथ रहे हैं, चाहे वो मल्होत्रा जी हों, अर्जुन जी, राजपाल जी, या शर्मा जी। हम सभी कई जन्मों से जुड़े हुए हैं। जब-जब मैं गुरु बनकर आता हूं, तब-तब तुम मेरे शिष्य बनकर आते हो।

असल में गुरुदेव एक पिछले जन्म की बात कर रहे थे, जब हम में से कुछ लोगों से उनकी पिछली मुलाकात हुई थी। उनके जैसा शख्स तो सतयुग, या कम से कम उसके बाद वाले युग से तो होगा।

अपने शिष्यों को आगे की राह दिखाने के उद्देश्य से उन्होंने 500 वर्ष पहले एक स्थापित सिद्ध गुरु के रूप में जन्म लिया था। बाकी लोगों से भी वे कुछ सौ साल पहले मिले और यह सिलसिला जारी रहा। लेकिन इससे पहले, हमें पूरण जी को सुनना चाहिए, जो एक दशक से ज्यादा समय तक गुरुदेव के घर के स्थान पर रहे और वहां सेवा की।

सवाल : तो आपके हिसाब से इस जिंदगी में उनसे मिलने वाले उनके ज्यादातर शिष्य उनसे पिछले जन्म में भी जुड़े थे? क्या यह आपकी राय हैं?

पूरण जी : जी हां

सवाल : क्या आप इसमें कुछ और भी बता सकते हैं?

पूरण जी : गुरु जी बताते थे कि इस जन्म में तुम सबको इकट्ठा करने में मुझे 500 साल लग गए। तो हमारा पिछले जन्म का रिश्ता है। इसीलिए उन्होंने हम सभी को इकट्ठा किया।

और उन्होंने निश्चित रूप से हमें दुनिया के अलग-अलग कोनों से इकट्ठा किया। उन्होंने इत्तेफाक की आड़ में हालातों को मोड़ा और फिर हम सभी से नाता जोड़ा।

संतलाल नाम के एक व्यक्ति उनकी इस जिंदगी के दूसरे पूर्वार्ध में उनसे मिले। उनसे मिलने से पहले संतलाल के बारे में बताने लायक कुछ खास नहीं था।

वे एक सरकारी मुलाज़िम थे, जिनके पास ताकत और पहुंच थी और स्वभाव में थोड़ा अभिमान भी था।

क्या उनके जैसा व्यक्ति एक शिष्य बनने के लिए योग्य था? बिल्कुल नहीं।

तो क्या वो एक आदर्श शिष्य बने? यकीनन वो बने।

संतलाल जी : पंजाब में एक जगह है गंगोवाल। मुझे किसी ने बताया कि वहां एक साधु रहते हैं, बड़े ज्ञानी-ध्यानी हैं, तो मैं वहां उनसे मिलने चला गया। जब मेरा नंबर आया तो उन्होंने मुझसे कहा, “कल आइए।” मुझे बड़ी निराशा महसूस हुई कि सारा दिन तो खड़े रहे थे।

मैंने उनसे कहा कि आप किसी सेवादार को बोल दीजिए, जितने बजे आप कहेंगे मैं उतने बजे आ जाऊंगा। तो उन्होंने कहा, “हां मैं बोल दूंगा।” मैंने सोचा यह बेवकूफ तो बना ही रहे हैं पर उन्हें मानना भी जरूरी है।

दूसरे दिन जब मैं वहां पहुंचा तो किसी ने मेरी कोई मदद नहीं की, ताकि मैं कतार में खड़े रहकर इंतजार किए बिना उनसे मिल सकूं। एक बार फिर मैं उनके पास पहुंचा तो उन्होंने कहा, “आप कल आओ।” चौथे दिन जब मैं गया तो उन्होंने फिर कह दिया कि कल आओ।

मैं पास की एक धर्मशाला में ठहरा था। उन दिनों होटल का तो रिवाज ही नहीं था, हमारे जैसे लोगों का। तो फिर जब मैं पांचवे दिन उनसे मिलने पहुंचा, तो उन्होंने मुझसे कहा कि मैंने बहुत कोशिश की है आपको अपनाने की, लेकिन आपका संबंध कहीं और है। मुझे इजाजत नहीं है कि आपको मैं अपना सकूं। मैंने पूछा, मेरा नाता किसके साथ है। तो उन्होंने मुझसे कहा कि जिसके साथ आपका नाता है, वो भी यहां इस समय आया हुआ है!

सवाल : अरे वाह!

संतलाल जी : मैंने कहा, मिलवा दो। तो वो कहने लगे कि इसका वक्त आएगा, अभी वक्त नहीं आया है। इन चीजों का वक्त होता है, जब सही वक्त आएगा तो आप मिल जाओगे उनसे।

संतलाल जी को अपने गुरु से मिलने में 15 साल लग गए। वो अपने किसी परिचित के साथ गुड़गांव गए थे, जो उन्हें गुरुदेव से मिलने ले गए थे। जब संतलाल जी ने गुरुदेव को देखा तो उन्हें उनमें कुछ खास नजर नहीं आया। गुरुदेव बड़े सीधे-सादे और आकर्षक आदमी नजर आए,और लुंगी पहने हुए जमीन पर बैठे हुए थे।

संतलाल जी के परिचितों ने गुरुदेव को दंडवत प्रणाम किया और संतलाल जी बस खड़े हुए थे। वे आगे बताते हैं.

संतलाल जी : मुझे याद है हम 12 बजे मिले थे गुरु जी से। वो बड़े साधारण थे, धोती पहने हुए थे और नीचे बैठे हुए थे गेट के पास। मैंने सोचा, “यह कैसे गुरु हैं?” वाकई मैंने यही सोचा था। उन सभी लोगों ने बहुत बार दंडवत प्रणाम किया और मैंने बस उनसे नमस्ते की। तब मैंने उनसे कहा कि मुझे आपसे प्राइवेट में बात करनी है। मुझे विश्वास नहीं हो रहा था कि इतने साधारण आदमी गुरुजी हो सकते हैं। मैंने उनसे पूछा कि क्या वे 1960 में पंजाब में गंगोवाल गए थे, तो उन्होंने कहा, “हां।” मैंने पूछा, वहां किससे मिले थे, तो उन्होंने बहुत अच्छी तरह से उसी साधु का विवरण दिया, जिनसे मेरी मुलाकात हुई थी।

सवाल : वो साधु जी का?

संतलाल जी : हां, क्योंकि उन्होंने मुझसे कहा था ना कि जिसके साथ तेरा संबंध है, वो इस जगह पर मौजूद है। तब गुरुजी ने मुझसे कहा कि बच्चे कहां ढूंढते हैं अपने गुरु को, बल्कि गुरु ही अपने बच्चों को ढूंढ लेता है। मैंने उनसे ऐसे ही पूछा था और उन्होंने मुझसे कहा कि वह पिछले 9 जन्मों से मेरे साथ हैं।

जिनके किरदार से आती हो सदाक़त की महक
उनकी तदरीस से पत्थर भी पिघल सकते हैं

बहुत-सी नामी हस्तियां कुछ दशकों तक मशहूर रहती हैं। राजाओं और रानियों को ज्यादा से ज्यादा कुछ हजार वर्षों तक याद रखा जाता है। लेकिन नरेंदर जी, उनकी पत्नी सरोज जी और उनके भाई वीरेंदर जी के बारे में तो लाखों वर्ष पूर्व भृगु संहिता में लिखा जा चुका था। उनकी शोहरत तो यकीनन हज़ारों-हज़ारों साल पुरानी है।

आइए अब सरोज जी और उनके पति से चर्चा करते हैं.

सरोज जी : जब मैं 1983 या 84 में बीमार थी, तो हम पहली बार गुरु जी से मिलने आए थे। उन्होंने मुझे एक मुनक्का में लॉन्ग और काली मिर्च दी थी। अगली सुबह मैं बिल्कुल ठीक थी। तब मुझे विश्वास नहीं हुआ कि मैं कैसे ठीक हो गई। इसके बाद बहुत-सी बातें हुई। अगली बार जब मेरे पति बीमार थे, तो मैं गुरुजी के पास गई और मैं रोने लगी थी। गुरुजी ने मुझसे पूछा, “की होया पुत।” मैंने कहा, “गुरु जी मेरे पति बीमार हैं।” उन्होंने कहा, “वो बिल्कुल ठीक हैं। जब मैं घर पहुंची तो वो बिल्कुल ठीक थे।

नरेंदर जी : मैं एक बात जरूर कहना चाहूंगा। गुरुजी के पास जब हम पहली बार गए 16 अगस्त 1983 का दिन था। तो गुरुजी ने कुछ नहीं, बस इतना कहा, “आओ पुत”। हमें बड़ी खुशी हुई। उन्हें देखकर हमें लगा कि ना जाने हम इनसे पहले कितनी बार मिल चुके हैं जबकि हम पहली बार मिल रहे थे। उनकी पर्सनालिटी में इतना जबर्दस्त आकर्षण था कि ऐसा लग रहा था, जैसे हम न जाने उन्हें कब से जानते हों।

गुरुदेव के बहुत-से शिष्य शुरुआत में उनसे मिलने के लिए कुछ खास इच्छुक नहीं थे। दरअसल, ये सोचना हमारी अक्लमंदी के दायरे से बाहर की बात थी कि भला एक इंसान, जिसे लोग गुरु कहते हैं, कैसे हमारा भाग्य, हमारी जिंदगी बदल सकता है और हमारे परिजनों, परिचितों का और हमारा इलाज कर सकता है।

कई बार तो हमें खुशामद करके उनसे मिलने ले जाया जाता था। लेकिन एक बार जब हम उन तक पहुंच जाते, तो उनके प्रभाव के आगोश में समा जाते थे।

मुझे एक मशहूर दोहा याद आ रहा है,

लाली मेरे लाल की जित देखूं तित लाल,
लाली देखन मैं गई ते मैं भी हो गई लाल

कवि कबीर कहते हैं कि जब उन्होंने गुरु की महानता देखी, तो वो उस महानता के रंग में रंग गए, जिसने उन्हें भी महान बना दिया।

स्थान पर लाल साहब का आगमन कुछ अलग था। उनकी कोई समस्या नहीं थी, जिन्हें सुलझाया जाना था। असल में उनके मन में 'गुरुदेव' के विचार को लेकर उत्सुकता थी और उन्होंने धैर्य रखकर इस पहेली को सुलझाया।

लाल साहब : मैं 1973 से कनाडा में रहने वाला एक औसत कैनेडियन था। मैं पार्टी करना और बियर पीना पसंद करता था। मैं कभी-कभी मंदिरों में भी जाता था। वहां मैं एक व्यक्ति से मिला, जिसने कहा, "मेरे गुरुजी आ रहे हैं"। मैंने कहा, ठीक है, मुझे अपना फोन नंबर और पता दो और वो कब आ रहे हैं। मुझे हवाई अड्डे पर किसी रिश्तेदार को छोड़ने जाना था। उसका घर रास्ते में था और मुझे पता चला कि वो टोरंटो जा रहे थे और वो पहले से ही यहां हैं। तो, मैंने दरवाजा खटखटाया, घर में कोई नहीं था। मैंने उन्हें फोन किया। उन्होंने कहा कि हम यहां नहीं हैं, अगले दिन आ जाओ। मैं अगले दिन वहां गया। टोरंटो में होने के कारण, वहां बहुत सारे लोग थे। तो, मैंने इंतजार किया। लोग आए और चले गए। शाम को मुझे अगले दिन आने के लिए कहा गया और मैं इसके लिए राजी हो गया। तो, मैंने अपने दफ्तर फोन किया और कहा कि मैं बीमार हूं। अगले दिन मैं फिर वहां गया और फिर वही हुआ। सुबह और शाम, मैं अभी भी वहीं हूं और उन्होंने मुझे फिर अगले दिन वापस आने के लिए कहा। तीसरा दिन था। तो, फिर वही सुबह, शाम। मैं तुमसे बताऊंगा तो तुम भी हंसोगे। शाम को 6 बजे कोई मेरे पास आया और कहा, "गुरुजी ने ये चाय तुम्हारे लिए भेजी है।" मैंने देखा कि उन्होंने मुझे आधा कप चाय भेजी है। आधा कप चाय! किसी ने चाय पी और बाकी की चाय मेरे पास भेज दी। मुझे नहीं पता कि कैसे, लेकिन मैंने इसे पी लिया। शाम के 7.30 बजे वो मुझे अंदर बुलाते हैं और मैं उनसे मिलने वाला आखिरी व्यक्ति हूं। उन्होंने पूछा, "बेटा, तुम क्या चाहते हो?" मैंने कहा,

"कुछ नहीं" तो उन्होंने कहा, "आओ बेटा, सेवा करना शुरू करो।" मुझे नहीं पता था कि सेवा क्या होती है, लेकिन फिर भी मैं इसके लिए सहमत था। मैंने कहा, "मैं सेवा करूंगा।"

गुरुदेव ने लाल साहब को जो आधा कप चाय भेजी थी, दरअसल वो उन्होंने पी थी। और इस चाय के जरिए उन्होंने लाल साहब के साथ अपने कुछ गुण और आध्यात्मिक शक्तियां बांटी थी।

लाल साहब : मैं 1980 के दशक के अंत में नई दिल्ली आया था। तब मैं गुड़गांव गया था। मेरे साथ फिर वही चीज हुई। सुबह 9 बजे, रात के 9 बजे, मैं अभी भी वहीं हूं, जबकि लोग अंदर जा रहे हैं, और उन्होंने मुझे कल वापस आने के लिए कहा। मैंने कहा, ठीक है। कोई बात नहीं, मैं कल वापस आऊंगा। अगले दिन फिर वही बात - सुबह के 9 बजे, रात के 9 बजे, लोग अंदर जा रहे हैं। मैं अभी भी इंतज़ार कर रहा हूं। तीसरे दिन भी वही हुआ। फिर रात को 9 बजे उन्होंने मुझे फोन किया और कहा, "पुत्तर आ गया?" जैसे उन्हें नहीं पता था कि मैं बाहर इंतजार कर रहा हूं। मैंने कहा, "हां जी, आ गया।" मैं उनसे केवल 5 सेकंड के लिए मिला और उसमें उन्होंने मुझसे कहा, "बेटा 1 जनवरी को वापस आ जाओ। आपकी मां सुबह 6.15 बजे ज्योति जलाएंगी।" इसलिए, मैं वैष्णो देवी गया और सुनिश्चित किया कि मैं सुबह 6.15 बजे गुड़गांव पहुंच जाऊं, इसलिए मैं यहां आया। मैं पहली बार 3 सप्ताह के लिए आया और मैं 5 महीने तक रहा।

लाल साहब को ये नहीं पता था कि गुरुदेव ने टोरंटो जाने से पहले मुझसे कहा था, "बेटा, मैं टोरंटो जाकर वहां किसी को सेवा देना चाहता हूं। तो बोल फिर दे दूं?" ज़ाहिर है मैंने कहा, "गुरुदेव बहुत बढ़िया विचार है।"

तो गुरुदेव ने अपने टोरंटो पहुंचने से पहले और उस आदमी से मिलने से भी पहले, उसे पहले ही चुन रखा था। वहां पर जो हुआ, उसे हम आस्था का इम्तेहान कह सकते हैं। यदि लाल साहब ने उस वक्त इंतजार ना किया होता या वो धीरज नहीं रख पाते, तो उन्हें वो संत बनने का अवसर नहीं मिल पाता, जो वे आज हैं।

लाल साहब की तरह गुरुदेव के बाकी शिष्य भी किसी ना किसी बहाने से उनकी शरण में आ ही गए, क्योंकि एक साथ मिलना तो उनके भाग्य में ही लिखा था। कभी इन शिष्यों के परिजन या दोस्त पहले आए और फिर वे उनकी मदद से महागुरु से जुड़े।

कभी-कभी कुछ शिष्य समूहों में एकत्रित हुए।

गुरुदेव को अपने पहले कुछ शिष्य अपने दफ्तर में मिले। उनके आधा दर्जन से ज्यादा सहकर्मी, मानवता के कल्याण के उनके मिशन में उनके साथ शामिल हुए थे।

इन लोगों में आर. सी. मल्होत्रा जी, एफ. सी. शर्मा जी, आर.पी. शर्मा जी, बड़े जैन साहब, डॉ. शंकर नारायण के साथ-साथ दत्ता जी भी शामिल थे, जिन्होंने कलकत्ता से अपनी सेवा की शुरुआत की थी।

गुरुदेव के इस आध्यात्मिक विकास रूपी वृक्ष की एक महत्वपूर्ण शाखा थे श्री आर.सी. मल्होत्रा जी, जो उनके शुरुआती शिष्य थे और दफ्तर में उनके सहयोगी भी। एक सर्वोत्तम गुरु बनने के गुरुदेव के प्रयोग उन्हीं से शुरू हुए थे।

मल्होत्रा जी याद करते हैं कि एक दोस्त को गुरु के रूप में अपनाना उनके लिए कितना मुश्किल था।

मल्होत्रा जी : गुरुजी मेरे बहुत गहरे दोस्त थे। गुरु को गुरु बनाना तो बहुत आसान है, अपने दोस्त को गुरु मानना बहुत मुश्किल है।

सवाल : हां, बहुत मुश्किल है।

मल्होत्रा जी शरारती थे, लेकिन बड़े दिलवाले थे। उन्हें गुरुदेव की खरी-खोटी सुनने में बड़ा मजा आता था। उनकी वफादारी की कोई मिसाल नहीं थी। उन्होंने अपना जीवन पहले गुरुदेव को समर्पित किया और बाद में उनके अनुयायियों और भक्तों को, जो उन्हें बहुत चाहते थे। वे आजीवन कुंवारे ही रहे और उन्होंने अपनी जिंदगी का अधिकांश वक्त सेवा करने और स्थान का कामकाज संभालने में लगाया।

उन्होंने नजफगढ़ में स्थान स्थापित किया, जो गुरुदेव की समाधि से लगा हुआ था और जहां हजारों लोग आज भी आशीर्वाद लेने आते हैं।

गुरुदेव की बेटी रेणु मज़ाकिया अंदाज में मल्होत्रा जी की शुरुआत का किस्सा बताती हैं, जो खुद मल्होत्रा जी ने उन्हें बताया था। यह जानकर आश्चर्य होता है कि कैसे भूत-प्रेतों से डरने वाले एक इंसान अध्यात्म के ऐसे शक्तिमान बने, जिनसे हर भूत घबराने लगा।

रेणु जी : वो कहते थे कि उन्हें भूतों से बड़ा डर लगता है। वह अक्सर टूर का काम भी नहीं लेते थे, क्योंकि उन्हें जंगलों में जाना होता था, जहां गेस्ट हाउस मिलना मुश्किल होता था। वो कहते थे कि जंगल में इतने सुनसान में रहना मेरे बस की बात नहीं है, कहीं कोई भूत आ जाए, कुछ हो जाए...। एक बार गुरु जी ने उन्हें बुलाया और अपना पाठ करने के लिए नीचे बैठ गए और ऊपर चादर लपेट ली। तब मल्होत्रा जी ने कहा, "भैया, जैसे तुम बैठे हो तो पहले तो मुझे तुम्हें ही देखकर डर लग रहा है।" तब कोई पाठ बताया था उनको गुरु जी ने, मुझे याद नहीं है क्योंकि हम लोग तो बस मजाक में ही सुन रहे थे सारी चीज। वो कहते हैं कि पाठ किया और मैं फंस गया। वो कहते हैं कि पाठ किया तो भूतों का डर तो दूर हो गया, लेकिन गुरु का डर बैठ गया।

भूतों का यह डर गुरु के डर में बदल गया। वैसे, ऐसा मैंने पहली बार सुना है।

गुरुदेव अपने एक कैम्प के दौरान मल्होत्रा जी को चामुंडा मंत्र की शक्ति दिखाने के लिए एक जंगल में ले गए थे। मल्होत्रा जी ने सफेद लिबास में कुछ आकृतियां अपनी ओर आते हुए देखीं। वो गुरुदेव की ओर मुड़े लेकिन उन्होंने देखा कि गुरुदेव कहीं नहीं थे।

तो आखिर गुरुदेव कहां चले गए थे?

दरअसल, गुरुदेव एक पेड़ के पीछे छिप गए थे और इससे मल्होत्रा जी खुद को अकेला महसूस करने लगे। इसके बाद मल्होत्रा जी ने चामुंडा मंत्र का जाप शुरू किया और जैसे-जैसे वो जाप कर रहे थे, वैसे-वैसे आकृतियां ओझल होने लगीं। जब गुरुदेव वापस लौटे, तब तक वो मल्होत्रा जी को उस मंत्र की शक्ति का एहसास करा चुके थे। मल्होत्रा जी के लिए उस मंत्र ने रक्षा कवच का काम किया।

इस पर यकीन करना ज़रा मुश्किल होगा, लेकिन यह सच है कि मल्होत्रा जी को सचेत रूप से अपने पिछले जन्मों की बातें याद नहीं थीं, जिनमें वो पहले ही संत बन चुके थे। हालांकि शुरुआत में, गुरुदेव से शक्ति पाने के बाद वो किसी बच्चे की तरह उन शक्तियों के साथ खेलते थे, मानो उन्हें कोई नया खिलौना मिल गया हो।

एक बार मल्होत्रा जी ने एक फल वाले से फल के दाम पूछे। फल बेचने वाले का व्यवहार बड़ा रूखा था और उसने पूछा कि जब उन्होंने पहले कभी कोई फल नहीं खरीदा, तो फिर वो इसकी कीमत क्यों जानना चाहते हैं। नाराज होकर मल्होत्रा जी ने अपनी इच्छाशक्ति से एक बैल से उसके फल के ठेले पर हमला करवाया और उसे पलटा दिया। वो अपनी शक्ति पर तो खरे उतरे, लेकिन गुरुदेव की नजरों में नाकाम रहे।

कई बार जब उन्हें देरी हो जाती, तो वो अपनी शक्ति का प्रयोग करके उस ट्रेन में भी विलंब करवा देते थे, जिससे वे यात्रा किया करते थे। वो नादौन के संतोष जी की टांग भी खींचा करते थे। संतोष जी भले इंसान थे और ऐसे में वो मल्होत्रा जी की शरारत के शिकार हो गए। मल्होत्रा जी ने संतोष जी को न जाने कैसे ये यकीन दिला दिया कि संतोष जी जिस मंत्र का जाप कर रहे हैं, उसका प्रभाव तब और ज्यादा बढ़ जाता है, जब इसे एक बैल के ऊपर, उसकी पूंछ की दिशा में बैठकर किया जाए।

उनकी इन्हीं शरारतों ने कई लोगों के लिए अध्यात्म को अपनाना आसान बना दिया। उनकी हर पहल बड़ी अनोखी होती थी। रवि त्रेहन जी इसकी एक और झलक दिखाते हैं.

रवि जी : गुरुदेव की आध्यात्मिक शक्तियों और प्रकृति पर उनके नियंत्रण के बारे में बात करते हुए, मुझे एक बहुत ही दिलचस्प घटना याद आती है। श्री आरसी मल्होत्रा जी उनके पहले और प्रमुख शिष्य थे। दोनों ने एक ही दफ्तर में काम किया और वे दोस्तों की तरह थे। लेकिन मल्होत्रा जी ने बताया कि एक आध्यात्मिक गुरु, जिन्हें वे अब तक अपना प्रिय मित्र मानते थे, की संगति में रहने के कारण वे धीरे-धीरे जीवन के आध्यात्मिक तौर-तरीकों की ओर बढ़ने लगे।

1971 में कभी हरिद्वार में पवित्र गंगा के जल में खड़े होकर, उन्हें दीक्षा दी गई थी और वो औपचारिक रूप से गुरुदेव के शिष्य बन गए। उन्होंने कहा कि अपने दीक्षा समारोह के दौरान उन्हें एक आश्चर्यजनक अनुभव हुआ। पूज्य गुरुजी पवित्र गंगा के जल में खड़े थे और नदी का

बहाव बड़ा तेज था। गुरुजी ने उन्हें पानी में इस तरह लेटने के लिए कहा, जिससे उनका सिर गुरुजी के पैरों को छू जाए। यह दंडवत प्रणाम था।

मल्होत्रा जी ने कहा कि उन्हें झिझक हुई क्योंकि पानी की धारा बहुत तेज थी और उन्हें तैरना नहीं आता था। उस समय गुरुजी ने उनके निर्देशों का पालन करने की आज्ञा दी। उन्होंने आश्चर्य जताते हुए बताया कि गंगा का बहता पानी अचानक शांत हो गया। उन्होंने गुरुजी की आज्ञा का पालन किया और दीक्षा समारोह संपन्न हुआ। इस घटना से आश्चर्यचकित मल्होत्रा जी ने साहस करके गुरुजी से पूछा कि गंगा का बहता जल कुछ देर के लिए स्थिर कैसे हो गया। उन्होंने बहुत शांति से उत्तर दिया कि प्रकृति के ये तत्व उनके नियंत्रण में हैं।

मैंने सोचा कि किसी और से सुनी गई ये कहानी आप लोगों के लिए मुनासिब रहेगी। किस्मत से मुझे एक पुराने फोन से मल्होत्रा जी की एक पुरानी रिकॉर्डिंग मिल गई।

मैंने इस रिकॉर्डिंग के अंश निकाले और इसे ठीक रवि त्रेहन जी के इंटरव्यू के बीच शामिल किया क्योंकि इसमें गुरुदेव की उसी घटना का जिक्र है, जिसमें उन्होंने गंगा नदी के पवित्र जल में खड़े होकर मल्होत्रा जी को अपना शिष्य नियुक्त किया था, और कैसे कुछ पलों के लिए नदी का बहाव थम गया था।

मल्होत्रा जी : जब उन्होंने मुझे अपना शिष्य बनाया तो उन्होंने हरिद्वार में मुझे अपना शिष्य बनाया?

सवाल : गंगा के नीचे?

मल्होत्रा जी : हां जी, गंगा के नीचे।

सवाल : पानी ठहर गया था?

मल्होत्रा जी : हां और उन्होंने मुझे अपने मुंह में पानी रखने को कहा। और जब वो मुझसे पानी पीने को कहते, तो वो पानी में थूकते थे। फिर मुझे पानी पीना होता था और पानी पीते समय मुझे किसी तरह की झिझक या घिन महसूस नहीं होनी चाहिए। तो उन्होंने जब भी मुझसे कहा

मैंने पानी पिया। फिर उन्होंने मुझे अपने गले लगा लिया और अपना कड़ा निकालकर मुझे पहना दिया।

गंगा के पानी में खड़े होकर गुरु ने अपने शिष्य को चरण अमृत प्रदान किया और बुड्ढे बाबा का दिया हुआ अपना कड़ा निकालकर मल्होत्रा जी के हाथों में पहना दिया और उन्हें अपना पहला शिष्य बनाया।

आइए वापस चलते हैं रवि त्रेहन जी के पास,

रवि जी : इसके तुरंत बाद उन्हें गुरुदेव के हाथों और उनके शरीर पर एक के बाद एक प्रकट होने वाले लगभग सभी प्रतीकों के दर्शन का गौरवपूर्ण सौभाग्य प्राप्त हुआ। उनके पास ओम, ज्योति, शिवलिंग, त्रिशूल, अर्धचंद्र, पदम, गणपति, नंदी और मां वैष्णो देवी की तीन पिंडियां थीं। और मल्होत्रा जी ने बताया कि वो पूरी तरह से डरे हुए थे। बाद में, कुछ शिष्यों और अन्य लोगों को भी समय-समय पर इनमें से कुछ दैवीय प्रतीकों के दर्शनों का सौभाग्य मिला।

बाद के वर्षों में मल्होत्रा जी कड़ी तपस्या से होकर गुज़रे और अपने आचरणों और गुणों को संवारा। उन्होंने खुद को मिली शक्तियों को संभालना भी सीख लिया। उन्होंने गुरुदेव के संत निर्माण कारखाने में आने वाले नए लोगों का मार्गदर्शन करने में गुरुदेव का हाथ भी बंटाया।

ज़रा गौर फरमाइए,
चले थे जिस जानिब से वो रास्ता तमाम हुआ
मैं गुज़रता रहा और सफ़र आसमान हुआ
और सफ़र आसमान हुआ

मल्होत्रा जी को प्यार से पप्पा जी कहा जाता था और आगे चलकर वो छोटे गुरुजी कहलाने लगे। इसके बाद उन्होंने अपनी मृत्यु तक, इस उपाधि की गरिमा बनाए रखी। गुरुदेव एवं उनकी पत्नी माताजी के निधन के पश्चात मल्होत्रा जी ने ही इस संस्थान का नेतृत्व किया और इसकी कमान संभाली।

मुंबई का खार जिमखाना भविष्य के संतों का स्रोत बना। वहां हम में से बहुत-से लोग, यानी उनके भावी भक्त और शिष्य, टेबल टेनिस खेलते हुए आपस में दोस्त बने थे। जब गुरुदेव इस शहर में आए और जब हम उनसे मिलने गए, तो हम में से अधिकांश लोग उनकी छत्रछाया में चले गए। इसके बाद हमें टेबल टेनिस के खेल को विराम देना पड़ा।

टेबल टेनिस खिलाड़ियों में हमारे बीच एक थे प्रदीप सेठी। उनके अंकल यश की वजह से ही गुरुदेव पहली बार मुंबई आए थे। जब गुरुदेव ने अपने हाथों से उनका इलाज किया तो पूरे मेडिकल समुदाय में हलचल मच गई थी, क्योंकि सभी डॉक्टरों ने जवाब दे दिया था और उनके बचने की कोई उम्मीद नहीं थी।

प्रदीप इस घटना पर रोशनी डालते हैं।

सवाल : प्रदीप, आपके एक अंकल थे, जो बहुत बीमार थे। अचानक एक दिन, मुझे पता चला कि वो मौत की कगार पर पहुंचने के बावजूद लगभग पूरी तरह ठीक हो चुके हैं। मुझे इस बारे में बताइए?

प्रदीप जी : यह तब शुरू हुआ जब मेरे अंकल को धीरे-धीरे पता चला कि वे डर्मेटोमायोसाइटिस नामक बीमारी से पीड़ित हैं, जो मांसपेशियों को कमजोर बना देती है।

लेकिन मेरे पिता हमेशा सदमे में रहते थे। वो सुबह-शाम घर में बनाए गए एक छोटे से मंदिर में बैठकर प्रार्थना करते थे। एक दिन शाम को जब हम अस्पताल पहुंचे तो एक बड़ी अद्भुत घटना घटी। एक संदेश था, "डॉक्टर से उनके कक्ष में मिलें"। डॉ सिंघल ने कहा कि विज्ञान में जो कुछ भी संभव था, उन्होंने सभी संभावनाओं को आजमाया, लेकिन इसके बावजूद उनकी हालत बिगड़ती जा रही है और उनके जीवन की अधिकतम अवधि बस कुछ महीनों की है। बेहतर होगा कि हम उन्हें वापस घर ले जाएं।

आखिरकार, अगले दिन हम उन्हें वापस ले गए, और आने वाले कुछ महीनों तक मेरे घर पर नियमित रूप से अलग-अलग संतों का आना-जाना लगा रहता था। लेकिन फिर भी उनकी हालत बिगड़ती जा रही थी। मेरे एक चाचा, जो नागपुर में रह रहे थे, एक दिन उन्होंने मेरे पिता को फोन करके कहा कि एक सज्जन वहां आए थे और पैंट-शर्ट पहने हुए थे, एक तंबू में रहते थे।

वो भारत सरकार के साथ काम करते हैं। बहुत-से लोग उसके पास जा रहे थे, वो उन्हें जल देते हैं। क्या मुझे जाना चाहिए? मेरे पिता ने कहा, "क्यों नहीं, इन्हें भी आजमाएं।" तो, अगले दिन सुबह वे चले गए लेकिन हमारे गुरुजी, गुरुदेव ने उनसे मिलने से इनकार कर दिया और उन्हें कुछ घंटों तक इंतजार कराया। अगले दिन, उन्होंने उन्हें फिर से बुलाया। तब उन्होंने कहा, “मैं तुम्हारे आने का उद्देश्य जानता हूं। आप अपने भाई के लिए आए हैं, जो मुंबई में गंभीर रूप से बीमार हैं। लेकिन इस समय मैं कुछ नहीं करना चाहता, मैं कुछ नहीं कर सकता।" वो झुक गए और रोने लगा। इसलिए, उन्होंने तय किया कि वो उन्हें मुंबई बुलाएंगे और आखिरकार गुरुदेव मुंबई आने के लिए राजी हो गए। लेकिन सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि उन्होंने एक सप्ताह पहले ही अपने सहयोगियों को मुंबई चलने के लिए तैयार होने को कहा था। शायद वो मेरे चाचा की परीक्षा ले रहे थे।

हम उन्हें एयरपोर्ट पर लेने गए थे। यह मेरे गुरु के पहले दर्शन थे। वो पहली बार में ही मुझे बहुत अच्छे लगे, लेकिन मुझे बिल्कुल यकीन नहीं था कि उस समय उनके पास असाधारण शक्तियां थीं। वे हमारे घर आए, एक हफ्ते तक वहीं रहे। उन्होंने हमें एक वचन और आश्वासन दिया कि हमारे चाचा ठीक हो जाएंगे। उन्होंने पहली बार मुंबई में सेवा शुरू की और धीरे-धीरे मेरे पिता की भी सेवा की। और 6 महीने की इस प्रक्रिया में हमें अपने अंकल की हालत में सुधार नजर आने लगे। वो जिस अवस्था में थे, वो अपने शरीर के किसी भी अंग को हिला नहीं सकते थे, और उनकी गर्दन नीचे झुकी हुई थी, लेकिन धीरे-धीरे उनमें बदलाव दिखाई देने लगा। इस प्रक्रिया के दौरान हमारे घर पर साप्ताहिक सेवाएं भी की जाती थीं, जिनमें बहुत लोग आते थे और ठीक होते थे।

सवाल : उन्होंने आपके चाचा का क्या इलाज किया? किस तरह का इलाज था?

प्रदीप जी : वो उन्हें जल दिया करते थे। उन्होंने उन्हें बहुत-से मंत्र दिए थे, जो इन्हें लगातार जपते रहने को कहा था। यही उनकी मूल चिकित्सा पद्धति थी। आध्यात्मिक उपचार में वे उनके माथे और शरीर के प्रभावित हिस्सों पर हाथ रखकर उपचार करते थे।

कुछ साल पहले जब मैं सेठी परिवार से मिलने गया था, तब मैंने यश को उनकी बद से बदतर हालत में देखा था। यह तब की बात है, जब उन्होंने किसी बाबा या किसी व्यक्ति को उनके इलाज के लिए बुलाया था, लेकिन वह इलाज काम ना आया। मैं उनके एक भाई संदीप से

अचानक मिला था, जिन्होंने मुझे उन लोगों की मदद लेने के लिए बुलाया था, जो यश का इलाज कर रहे थे। मैं भी वहां अपने आर्थराइटिस के इलाज की उम्मीद लिए पहुंच गया था, लेकिन मुझे अपने मर्ज की कोई दवा नहीं मिली।

एक साल बाद जब मैं संदीप से दोबारा एयरपोर्ट पर मिला, तो उन्होंने मुझे बताया कि उनके भाई की हालत काफी बेहतर है। मैं यह सुनकर दंग रह गया और मैं उनसे मिलने पहुंचा। ये वही यश थे, जो मौत की कगार पर पहुंच चुके थे, और वो ही दरवाजा खोलकर मुझे सीढ़ियों से पहले फ्लोर पर ले गए। यदि उनकी एक साल पहले की खराब हालत से कुछ बाकी था, तो बस थोड़ी-सी लड़खड़ाहट।

गुरुदेव के लिए दूधिया रंग के चोले पहने संतों को ढूंढना खजाने की खोज जैसा था। इस आध्यात्मिक खोज में उनका अधिकांश समय व्यतीत हुआ। हिमाचली लोगों को साधना सबसे आसान था, ठीक पंजाब और उत्तरी भारत के दूसरे हिस्सों में रहने वालों की तरह!

सबसे ज्यादा मुश्किल तो उन लोगों के साथ हुई, जो मुंबई से थे। हम लोगों में से ज्यादातर लोग नास्तिक थे और अध्यात्म के विषय में हमारी कोई दिलचस्पी नहीं थी। यह विषय आसानी से हमारे गले भी नहीं उतरता था।

लेकिन मशहूर शायर निदा फ़ाज़ली ने भी क्या खूब कहा है,

अपनी मर्ज़ी से कहां अपने सफ़र के हम हैं
अपनी मर्ज़ी से कहां अपने सफ़र के हम हैं
रुख हवाओं का जिधर का है, उधर के हम हैं
रुख हवाओं का जिधर का है, उधर के हम हैं

शुक्र है गुरुदेव मार्गदर्शन करने का कोई शुल्क नहीं लेते थे, वर्ना हम जैसे अधिकांश मुंबईकरों को तो भारी रकम चुकानी पड़ती।

गुरुदेव ने भले ही एक मिनट से भी कम समय में मेरी लाइलाज बीमारी ठीक कर दी थी, तब भी मुझे विश्वास नहीं हुआ। लेकिन 5 साल बाद कुछ घटनाएं ऐसी हुईं, जो कल्पनाओं से भी ज्यादा अजीब थीं, और इन घटनाओं ने मेरी सोच का रुख बदला।

गुरुदेव के हाथों मेरा इलाज एक अपचारक के सहयोग से हुआ था, जिन्होंने ध्यान के जरिए अपने स्वर्गीय गुरु से संपर्क बनाया और उनके मार्गदर्शन में ज्वेल थेरेपी का प्रयोग करके मेरा उपचार किया था। लेकिन फिर भी मेरा मन ये मानने को तैयार नहीं था कि मेरे साथ क्या हुआ। मैं इसके पीछे के कारण तलाशने लगा। दरअसल, मैं तो बस यही मानना चाहता था कि यह सिर्फ वशीकरण का मामला है, और कुछ नहीं! अपने शक पर यकीन करने के लिए मैंने हिप्नोथेरेपी का कोर्स भी किया, लेकिन मैं नाकाम रहा।

पाँच साल बाद जब मैं अफ्रीका में था और जब भी ऐसा कोई काम करने की कोशिश करता जो नैतिक दायरे में नहीं होता था, तो एक अदृश्य शक्ति मेरा रास्ता रोक लेती थी। ऐसा दर्जनों बार हुआ। और जब भी नैतिकता से भटकने पर मुझे रोका जाता था, तो मेरे अंतर्मन में वो कड़ा दिखाई देता था, जो वर्षों पहले गुरुदेव ने मुझे पहनाया था।

मैं जानता था ये अजीब है, लेकिन फिर भी सारे इत्तेफाक बार-बार हो रहे थे और ऐसे में इसे अनदेखा नहीं किया जा सकता था। मुझे महसूस हुआ कि यह तो गुरुदेव का काम है। उन्होंने मेरे दिलो-दिमाग पर इतना असर किया कि मुझे आस्था की ओर रुख करना ही पड़ा।

तो कुछ लोग इसमें आसानी से आ गए, कुछ को मुश्किलें पेश आईं और कुछ तो बस सहज रूप से इसमें बहते चले गए। महागुरु का कलेक्शन सेंटर सफलता की एक ऐसी कहानी बयां करता है, जिसमें उनके अधिकांश पूर्व शिष्य और श्रद्धालुओं का मिलन हुआ। इतना ही नहीं, उनके शिष्यों के शिष्यों पर भी उनका करिश्मा काम कर गया और आज एक टीम के रूप में हम उनके बेहद आभारी हैं, जिनकी झलक हम सभी में है।

हम यह भी जानते हैं कि इस उर्दू शायरी के क्या मायने हैं,

मैं अकेला ही चला था जानिबे मंजिल मगर
मैं अकेला ही चला था जानिबे मंजिल मगर

लोग साथ आते गए और कारवां बनता गया
लोग साथ आते गए और कारवां बनता गया